१ओंकार सतिगुर प्रसादि ।।

खालसा पंथ की सृजना के अभियान की सम्पूर्णता

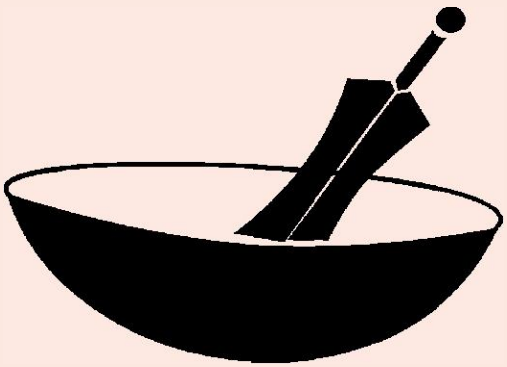

316 वीं वर्षगांठ के पुनीत अवसर पर
आप सभी को हार्दिक बधाई !!!

पीओ पाहुल खण्डेधार, होय जन्म सुहेला
नानकशाही सवंत – 545

प्रकाशक
क्रांतिकारी जगत् गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

लेखक : स. जसबीर सिंघ Ph. : (0172-2696891), 09988160484

Download Free

੧ओंकार सतिगुर प्रसादि।।

गुरूदेव का मुख्य लक्ष्य

गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने अनुभव किया कि सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरू नानक देव जी ने समस्त मानव समाज के उत्थान के लिए जो प्रयास किये उनमें सबसे पहले यह नारा बुलंद किया, 'न कोई हिन्दु न कोई मुसलमान' जिसका तात्पर्य था कि समस्त मानव जाति एक पिता परमेश्वर की सन्तान है अर्थात 'एक पिता एकस के हम बारिक' गुरूदेव जी ने तब यह अनुभव किया था कि जन साधारण के दुखों का मूल कारण अज्ञानता, प्राधीनता, आर्थिक विषमता तथा जाति पाति पर आधारित वर्गीकरण इत्यादि है। अत: उन्होंने इन सामाजिक बुराईयों से जूझने तथा एक आदर्श समाज की स्थापना करने के लिए जीवन पद्धति में मूलभूत परिवर्तन अनिवार्य समझते हुए एक सबल, स्वतन्त्र अथवा स्वावलम्बी व्यक्तित्त्व के मानव की परिकल्पना की थी, जो कि सदैव निस्वार्थ भाव से परहित में कार्यरत रहें। ऐसे सम्पूर्ण समर्पित एवँ निष्ठावान व्यक्तियों के योगदान से जटिल एवं जोखिम भरी समस्याओं के समाधान हेतु, उन्होंने उस समय के क्रूर शासकों, समाज के संकीर्ण विचारधारा वाले स्वार्थी तथा कुटिल प्रवृत्ति के लोगों से लोहा लेने की ठान ली थी। गुरूदेव ने विचार दिया था कि सत्ताधारी को धर्मी पुरूष होना चाहिए अथवा सत्ता को धर्मी पुरूषों के हाथों में सौंपा जाना चाहिए अन्यथा आदर्श समाज की कल्पना व्यर्थ है। उन्होंने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संत-सिपाही अथवा राज योग (मीरी -पीरी) की नई आदर्श प्रणाली का सूत्रपात किया था। जिस से शोषित वर्ग को उनके 'मूल मानव' अधिकार दिलवाएं जा सके तथा समाज में किसी व्यक्ति के साथ भी रंग-नस्ल, धर्म, जाति, भाषा, लिंग अमीरी-गरीबी और मालिक - नौकर के आधार पर कोई भेदभाव न किया जा सके। समाज के सभी वर्गो को प्रत्येक दृष्टि से समानता दिलवाना तथा मानव समाज को एक सूत्र में बाँधना गुरूदेव का मुख्य लक्ष्य था, जिस से एक नये वर्ग विहीन समाज की उत्पत्ति हो सके अर्थात समस्त प्राणी मात्र का कल्याण हो सके। गुरूदेव के शब्दों में, 'सरबत दा भला' तात्पर्य यह है कि उज्जवल आचरण वाले (विकार रहित) मनुष्य जो सदैव समाज कल्याण के लिए कार्यरत रहें ताकि समाज को नई दिशा दी जा सके। इस को साकार रूप देने के लिए उन्होंने क्रान्तिकारी आदेश जारी किये थे -

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ।

सिरु धरि तली गली मेरी आउ।

इतु मारगि पैरु धरीजै।

सिरु दीजै काणि ना कीजै।

(गुरू नानक देव जी, राग प्रभाती, पृष्ठ 1412)

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने अपना त्रि-सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया था अर्थात किरत करो, वंड छको (बांट कर खाओ), नाम जपो। ऐसे न्यारे मनष्य की रूप देखा स्वयँ गुरू नानक देव जी ने तैयार की थी और अपने उत्तराधिकारियों को दिशा निर्देश भी दिये थे कि वे इस कार्य को आगे बढ़ाने का अभियान जारी रखें, जिस को उनके आठ उत्तराधिकारियों ने आगे बढ़ाते चले आ रहे हैं और मुझे भी इस आदेश को साकार रूप देकर खालसा पंथ की सृजना करनी चाहिए। जिसका प्रारूप तैयार करने में हम समस्त गुरू साहबान को लगभग 200 वर्ष लग चुके हैं।

अन्त में गुरूदेव ने प्रथम गुरूदेव की इस परिकल्पना को सम्पूर्ण करने के लिए लम्बी तैयारी के पश्चात् एक योजनाबद्ध कार्यक्रम बनाया और उसको क्रियान्वित करने के लिए पहली बैशाखी सन् 1699 का दिन निश्चित किया।

खालसा पंथ की सृजना

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी को अन्याय का सामना करने के लिए शक्ति की आवश्यकता थी। वे भक्ति और अध्यात्मवाद की यह गुरू-परम्परा को शक्ति और शौर्य का बाना पहन कर, उसे विश्व के समक्ष लाने की रूपरेखा तैयार कर रहे थे। वैसे तो गुरू अमरदास जी के समय से ही सिक्ख बैशाखी के दिन जोड़-मेले (समारोह) करते थे परन्तु सन् 1699 की बैशाखी के समय गुरूदेव ने एक विशेष समरोह का आयोजन किया। सिक्खों को भारी संख्या में आनन्दपुर साहब पहुँचने के लिए निमन्त्रण पहले से ही भेज दिये गये थे और सिक्खों को शस्त्रबद्ध होकर आने को कहा गया था। संदेश पाते ही देश के विभिन्न भागों से सिक्ख गुरूदेव के दर्शनों के लिए काफिले बनाकर बड़ी संख्या में उपस्थित हुए।

पहली बैसाखी को गुरूदेव ने एक विशेष स्थल में मुख्य समारोह का प्रारम्भ प्रात:काल आसा की वार कीर्तन से किया। गुरू शब्द, गुरू उपदेशों पर विचार हुआ। दीवान की समाप्ति के समय गुरूदेव मंच पर हाथ में नंगी तलवार लिए हुए पधारे और उन्होंने वीर रस में प्रवचन करते हुए कहा - मुगलों के अत्याचार निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं। हमारी बहू-बेटियों की इज्जत भी सुरक्षित नहीं रही। अत: हमें अकाल पुरूष की आज्ञा हुई है कि अत्याचार-पीड़ित धर्म की रक्षा हेतु ऐसे वीर योद्धाओं की आवश्यकता है जो अपने प्राणों की आहुति देकर दुष्टों का दमन करना चाहते हैं वह अपना शीश मेरी इस रणचण्डी (तलवार) को भेंट में दे। तभी उन्होंने अपनी म्यान में से कृपाण (श्री साहब) निकाली और ललकारते हुए सिंह गर्जना में कहा - है कोई मेरा प्यारा शिष्य जो आज मेरी इस रणचण्डी (भवानी) की प्यास अपने रक्त से बुझा सके?इस प्रश्न को सुनते ही सभा में सन्नाटा छा गया। परन्तु गुरूदेव के दोबारा चुनौती देने पर एक निष्ठावान व्यक्ति हाथ जोड़कर उठा और बोला - मैं हाजिर हूँ, गुरूदेव ! यह लाहौर निवासी दयाराम था। कहने लगा - मेरी अवज्ञा क्षमा कर दें, मैंने देर कर दी। मेरा सिर आप की अमानत ही है, मैं आपको यह सिर भेंट में देकर अपना जन्म सफल करना चाहता हूँ, कृपया इस को स्वीकार करें। गुरूदेव ने उस को बाजू से पकड़ा तथा खींचकर एक विशष तम्बू में ले गये। कुछ क्षणों में ही वहाँ से वही खून से सनी हुई तलवार लिए हुए गुरूदेव लौट आए तथा पुन: अपने शिष्यों को ललकारा - यह एक नये प्रकार का दृश्य था, जो सिक्ख संगत को प्रथम बार दृष्टिगोचर हुआ। अत: समस्त सभा में भय की लहर दौड़ गई। वे लोग जो गुरूदेव की कला से परिचित नहीं थे। विश्वास-अविश्वास की मन ही मन लड़ाई लड़ने लगे। इस प्रकार वे दुविधा में श्रद्धा भक्ति खो बैठे। इन में से कई तो केवल मसंद प्रवृत्ति के थे, जो जल्दी ही मानसिक सन्तुलन भी खो बैठे और लगे कानाफूसी करने कि पता नहीं आज गुरूदेव को क्या हो गया है ?सिक्खों की ही हत्या करने लगे हैं। इन में से कुछ एकत्र होकर माता गुजरी के पास शिकायत करने जा पहुँचे और कहने लगे पता नहीं गुरूदेव को क्या हो गया है! वह अपने सिक्खों को ही मौत के घाट उतार रहे हैं। यदि इसी प्रकार चलता रहा तो सिक्खी-सेवकी समाप्त होते देर नहीं लगेगी। यह सुनकर माता जी ने उनको सांत्वना दी और अपनी छोटी बहू साहब देवी को गुरूदेव के दरबार की सुध लेने भेजा। साहब देवी जी ने घर से चलते समय भेंट में बताशे पल्लू में बांध लिये और दर्शनों के लिए चल पड़ी।

उधर दूसरी बार ललकारने पर श्रद्धावान सिक्खों में से दिल्ली निवासी धर्मदास (जाट) उठा। गुरूदेव उसे भी उसी प्रकार खींच कर तम्बू में ले गये और फिर जल्दी ही खून से सनी तलवार लेकर मंच पर आ गये और वही प्रश्न फिर दोहराया कि मुझे एक सिर की और आवश्यकता है। इस बार भाई मुहकमचन्द (छींबा) गुजरात द्वारका निवासी उठा और उसने स्वयँ को गुरूदेव के समक्ष प्रस्तुत किया और कहा - गुरूदेव! मेरा सिर हाज़िर है। गुरूदेव ने उसे भी तुरन्त पकड़ा और खींच कर तम्बू में ले गये। कुछ क्षणों पश्चात् फिर लौटकर मंच पर आ गये पुन: वही प्रश्न दोहराया कि मुझे एक सिर की और आवश्यकता है।

इस बार खून से सनी श्री साहब देखकर बहुतों के दिल दहल गये किन्तु उसी पल भई हिम्मत चन्द लांगरी निवासी जगन्नाथपुरी उड़ीसा उठा और कहने लगा कि गुरूदेव मेरा सिर हाज़िर है। ठीक इसी प्रकार गुरूदेव पाँचवी बार मंच पर आये और वही प्रश्न संगत के सामने रखा कि मुझे एक सिर और चाहिए, इस बार बिदर – करनाट का निवासी साहब चन्द (नाई) उठा और उसने विनती की कि मेरा सिर स्वीकार करें। उसे भी गुरूदेव उसी प्रकार खींचकर तम्बू में ले गये। अब गुरूदेव के पास पाँच निर्भीक आत्म बलिदानी सिक्ख थे जो कि कड़ी परीक्षा में उत्तीर्ण हुए थे। इस कौतुक के तद्पश्चात इन पाँचों को एक जैसे नीले वस्त्र, केसरी दास्तार कछैहरे और लघु कृपाण पहनने को दिये और उन्होंने स्वयँ भी इसी प्रकार का बाणा (परिधान) पहना। तब इन पाँचों मृतजीविओं को अपने साथ पण्डाल में लेकर आये। उस समय इन पाँचों को आकर्षक तथा सुन्दर स्वरूप में देखकर संगत आश्चर्य में पड़ गई क्योंकि इनके चेहरे से विजयी होने का नूर झलक रहा था। तभी गुरूदेव ने भाई चउपति राये को आदेश दिया कि वह चरणामण्त वाले मटके को पानी सहित सतलुज में प्रवाहित कर दे और उसके स्थान पर सरब लोह के बाटे (बड़ा लोह पात्र) में स्वच्छ जल भर कर लाये। ऐसा ही किया गया। गुरूदेव ने इस लोह पात्र को पत्थर की कुटनी पर स्थिर करके उसमें खण्डा (दोधारी तलवार) बीर आसन में बैठकर घुमाना प्रारम्भ कर दिया तभी आप की सुपत्नी साहब देवी दर्शनों को उपस्थिति हुई। उन्होंने बताशे भेंट किये जिसे गुरूदेव ने उसी समय लोहपात्र के जल में मिला दिये और गुरूबाणी उच्चारण करते हुए खण्डा चलाने लगे। सर्वप्रथम उन्होंने जपुजी साहिब का पाठ किया तद्पश्चात जापु साहिब, सवैया, चौपई तथा आनन्द साहिब का क्रमश: पाठ किया, समाप्ति पर अरदास की और जयकार के पश्चात 'खण्डे का अमृत' वितरण करने की मार्यादा प्रारम्भ की। सर्वप्रथम गुरूदेव ने तैयार अमृत (पाहुल) के छींटे उनकी आँखों, केशों और शरीर पर मारते हुए आज्ञा दी कि वे सभी बारी बारी बाटे (लोह पात्र) में से अमृत पान करें (पीयें) यही क्रिया पुन: वापस दुहराई अर्थात उसी बर्तन से दो बार अमृत पान करने को कहा जिससे ऊँच नीच का भ्रम सदैव के लिए समाप्त हो जाये और एक भ्रातृत्त्व भावना उत्पन्न हो जाए।

आप जी ने उसी समय पाँचों सिक्खों के नामों के साथ "सिंघ" शब्द लगा दिया जिसका अर्थ है बब्बर शेर। इस प्रकार उनके नये नामकरण किये गये आधा नाम उनको गुरूदेव ने दिया और आधा नाम उनके अभिभावकों वाला ही रहने दिया। इन पाँचों परमस्नेही शिष्यों को जिन्होंने गुरूदेव के एक संकेत पर अपना सर्वत्र न्योछावर कर दिया था। पाँच प्यारों की उपाधि से सम्मानित किया और उनको विशष उपदेश दिया –

आज से तुम्हारा पहला जन्म, जाति, कुल, धर्म सभी समाप्त हो गये हैं। आज से आप सभी गुरू वाले हो गये हैं। अत: आज से तुम मेरे जन्मे पुत्र हो, तुम्हारी माता साहब कौर, निवासी केशगढ़, आनन्दपुर

साहब हैं और तुम्हारी जाति खालसा है क्योंकि सिहों की केवल एक ही जाति होती है। अब आप लोगों की वेश-भूषा पाँच ककारी वर्दी होगी - केश, कंघा, कड़ा, कछैहरा तथा कृपाण। आप नित्यकर्म में अमृतबेला में जागकर वाहे गुरू के संग सुरति जोड़कर नाम-वाणी का अभ्यास अवश्य ही करोगे। उपजीविका के लिए धर्म की कीरत करोगे और अर्जित धन बांट कर सेवन करोगे। इसके अतिरिक्त चार शपथें (रहित) दिलवाई।

चारसूत्री कार्यक्रम

1. केशों का अपमान न करना।
2. कुटठा न खाना (वह मांस है जो मुसलमानी तरीके से तैयार किया गया हो)
3. परस्त्री या परपुरूष का गमन (भोगना) न करना।
4. तम्बाकू का सेवन न करना।

गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि इन चार कुरीतियों में से एक के भी भंग होने पर व्यक्ति पतित समझा जाएगा और वह निष्कासित माना जाएगा। यदि वह पुन: सिक्खी में प्रवेश करना चाहता है तो उसे पाँच प्यारों के समक्ष उपस्थित होकर दण्ड लगवाकर पुन: अमृत धारण करना होगा। गुरूदेव ने उन्हें समझाते हुए कहा - आप पाँच परमेश्वर रूप में उनके गुरू हैं, इसलिए वे भी अब उनके सेवक (शिष्य) हैं। उन पाँचों ने तब कहा - ठीक है ! परन्तु गुरू दक्षिणा में उन्होंने अपने सिर भेंट में दिये हैं। अब वे क्या देंगे ?इस पर गोबिन्द राय जी ने कहा - आप की मांग उचित है। वे दाम तो दे नहीं सकते क्योंकि अमृत अमूल्य निधि है परन्तु भेंट दे सकता हूँ जो कि अभी उधार करता हूँ। समय आने पर वे भी अपना समस्त परिवार उन लोगों पर गुरू दीक्षा के बदले निछावर कर देंगे। उन पाँचों ने मिलकर तब गोबिन्द राय जी के लिए भी उसी प्रणाली द्वारा अमृत तैयार किया और उनको भी अमृतपान कराया तथा उन का नामकरण पुन: किया जिस से उनका नाम भी बदल कर गोबिन्द राय से गोबिन्द सिंघ कर दिया गया। तद्पश्चात् गुरूदेव के बाकी शिष्यों ने भी गुरू दीक्षा लेने के लिए प्रार्थना की तथा इस नई विधि अनुसार अमृत धारण किया। जिस से उनकी पहली कुल, वर्ण जाति तथा नाम आदि को परिवर्तित कर नए नामकरण किये गये।

जगत गुरू नानक देव जी की सुनियोजित प्रक्रिया के परिणामस्वरूप उच्च मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने में समस्त गुरू साहबान का समान योगदान रहा। जब दसवें गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने खालसा पंथ को सम्पूर्ण किया जो उन्होंने उसे न्यारा तथा अनादि बनाने के लिए कुछ विशेष आदेश दिये, जिस से खालसा पंथ का स्वरूप कभी भी परिवर्तित न हो - 'पूजा अकाल की, परचा शब्द का एवं

दीदारखालसा का' अर्थात एक परमपिता परमेश्वर की पूजा – मार्गदर्शन गुरू ग्रंथ साहब की वाणी का – दर्शन दीदार साध संगत के।

खालसा अकाल पुरख की फौज।।

प्रगटियो खालसा परमातम की मौज।।

ये थे वे सबसे पहले पाँच सिक्ख जिन्होंने सिर भेंट करके सिद्ध कर दिया था कि वे सम्पूर्ण पुरूष बनने के अधिकारी हैं क्योंकि जो व्यक्ति अपने चुने हुए आदर्श के लिए बलिदान देने का साहस नहीं रखता, वहभले ही कितना ही पढ़ा लिखा हो, कितना ही ज्ञानी–तपस्वी को, अथवा दानी क्यों न हो, पूर्ण व्यक्ति नहीं कहा जा सकता। वह व्यक्ति अभी कच्चा है और खोखला है। उसका ज्ञान–ध्यान केवल दिखावा अथवा मन–बहलावा कहा जा सकता है। जो अपने सिद्धान्तों के लिए अन्तिम कदम उठाने से घबराता है, उसके सिद्धान्त, केवल अवसरवादी नीति तक ही सीमित रह सकते हैं। ऐसे व्यक्ति के लिए उस धार्मिक जत्थे–बन्दी में कोई स्थान नहीं जो गुरू गोबिन्द सिंघ ने बैशाखी वाले दिन 13 अप्रैल, 1699 को व्यक्तियों की परख करके प्रारम्भ की।

यह जत्थे–बंदी एक बिल्कुल नई धार्मिक जमात का बीजारोपण था, हिन्दू और मुसलमानों से पृथक किन्तु दोनों के मध्य एक पुल की भांति क्योंकि इसमें सम्मिलित होने के लिए हिन्दू हो अथवा मुसलमान, कोई शर्त नहीं थी। कोई भी व्यक्ति जाति–पाति, ऊँच–नीच या अमीरी–गरीबी के अन्तर के बिना इस नई जत्थे–बन्दी में शामिल हो सकता था। केवल शर्त थी ऊँचे और सच्चे जीवन के कुछ सिद्धान्तों पर विश्वास रखने की और उन सिद्धान्तों के लिए मर–मिटने की, वरना गुरू साहब के पहले पाँच प्यारों में से तीन पूर्णत: गरीब और लताड़ी हुई जातियों के व्यक्ति थे जो हिन्दू धर्म के अनुसार नीची जातियाँ समझी जाती हैं।

इस मार्ग पर चलने वालों के सामने पूजा और नमाज़, मस्जिद या मन्दिर, राम या रहीम, हिन्दू अथवा मुसलमान में कोई अन्तर नहीं था। गुरू साहिब ने एक नया नारा दिया –

'हिन्दू तुरक कोउ राफज़ी इमाम साफ़ी।

मानस की जात सभै एकै पहिचानबो।

देहुरा मसीत सोइ पूजा औ निमाज़ ओही।

मानस सभै इक पै अनेक कौ भरमाउ है।'

यह रास्ता पकड़ने के लिए किसी को मजबूर नहीं किया गया। कोई भी अपनी इच्छानुसार इसे चुन सकता था जिसमें खंडे की धार पर चलने की हिम्मत हो। कहा गया है कि जिसे मरना नहीं आता, उसे जीना क्या आएगा यह नया मार्ग, धर्म, न्याय, मानवता, मानवीय बराबरी, सम्मान और हर प्रकार की स्वतन्त्रता के लिए मिटने वालों का था।

यहाँ यह बात भी बताना आवश्यक है कि गुरू साहिब ने हिन्दुओं और मुसलमानों से पृथक एक तीसरा पंथ तो चलाया, पर इस कारण नहीं कि उन्हें एक नया धर्म चलाकर स्वयँ को परमश्वर का दर्जा दे अपनी पूजा कराने का चाव था जैसे बहुत सारे प्राचीन पैगम्बर अथवा देवता करते आए हैं। उन्होंने सिक्खों की स्पष्ट कह दिया –

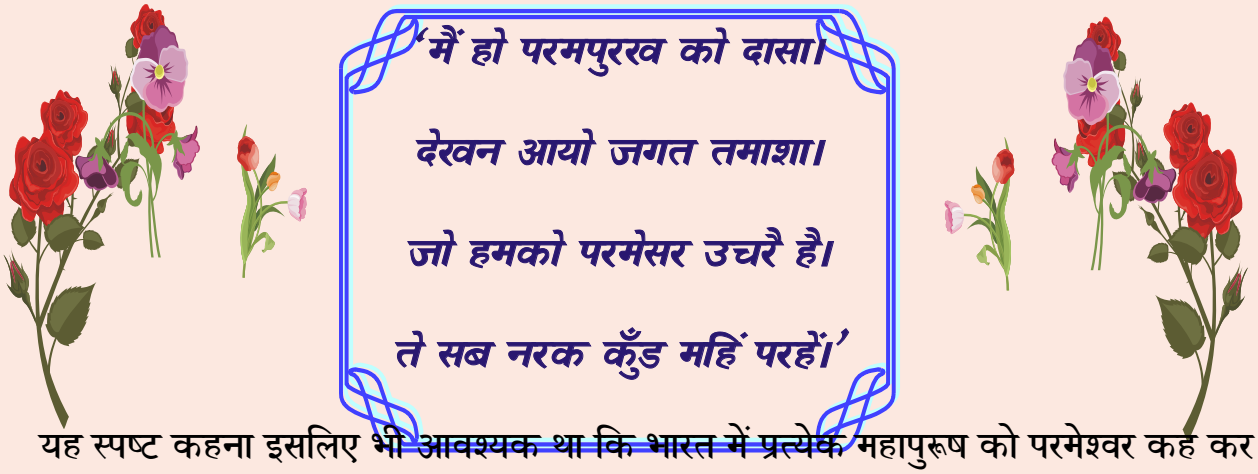

यह स्पष्ट कहना इसलिए भी आवश्यक था कि भारत में प्रत्येक महापुरूष को परमेश्वर कह कर उसकी ही पूजा करने लग पड़ना एक प्राचीन बीमारी है और इसी कारण पूजा–योग्य देवताओं की संख्या भी इतनी ही पहुँच गई है, जितनी की पुजारियों की। गुरूदेव का एकमात्र उद्देश्य एक नया जीवन मार्ग दर्शाना था ना कि अपनी पूजा करवानी। उनकी आज्ञानुसार पूजा केवल एक अकाल पुरूष की ही हो सकती है, किसी व्यक्ति विशेष की नहीं।

आपे गुरू चेला

विश्वास और श्रद्धा की परीक्षा तो हो गई। किन्तु अभी विश्वास वालों पर धर्म की मोहर लगानी बाकी थी। प्राचीन शिष्यों में नवजीवन फूंकने के लिए चोला बदल कर न्यारापन देने की अति आवश्यकता थी। सदियों पुराने संस्कारों को त्यागने के लिए जीवन के नये मूल्यों, नये मार्गो और नये दृष्टिकोण दर्शा कर, खालसा अथवा पूर्ण मानव बनने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों के मस्तिष्क अथवा हृदय पर कुछ ऐसे कड़े परन्तु व्यवहारिक नियम निर्धारित करने की आवश्यकता थी क्योंकि वे फिर फिसल कर पुराने मार्गो पर न चल पड़ें। नये आदर्शो को ठोस चिन्हों में ढालकर सामान्य व्यक्तियों के समक्ष प्रस्तुत करना था, जिससे वह उन आदर्शो के भाव को सहजता के साथ समझ लें तथा प्रत्येक क्षण याद रखें।

किसी नये सजे मनुष्य को अपनी सुधरी दशा का अहसास कराने के लिए, उसमें स्वाभिमान और एक समूची जमात के सांझापन की नींव डालने के लिए, बाह्य रूप और विचारों की एकता आवश्यक थी। गुरू जी भी जब नीचों को आसमान पर चढ़ाने लगे, गीदड़ों को शेर बनाने लगे तब उन्होंने भी इन सर्व-सम्मत साधनों का ही उपयोग किया।

वे साधन क्या थे ?वह नया रूप क्या था ?वह साधन था अमृत छकाने का और नया रूप था स्वयँ गुरू गोबिन्द सिंघ का अपना। उन्होंने अपनी समस्त मानसिक और शारीरिक शक्तियाँ नवीन व्यक्ति में भर दीं जिससे गुरू-चेले का अन्तर ही समाप्त हो गया। गुरूदेव ने अपने शब्दों में इस भाव को इस प्रकार प्रकट किया है -

आतम रस जिह जानही, सो है खालसा देव ।।

मो मैं प्रभ मैं, तास मैं, रचक नाही भेव ।।

यह एक ऐसी आशीष थी कि समयानुसार हर सिक्ख गुरू गोबिन्द सिंघ बन गया। गुरूदेव ने नया मनुष्य सजाकर उसे कहा - 'जा, तू भी वैसा ही संत-योद्धा, कर्म-योगी, बहादुर, चौड़ी छाती वाला, सरू कद, निडर, दुखियों का दर्द-मन्द, ज़ालिमों का दुश्मन, स्वतन्त्रता का पुजारी, स्वतंत्र दिल-दिमाग वाला, पाखंडों को उघाड़ने वाला, कृति-कर्म में विश्वास रखने वाला, बाँट कर खाने वाला, गरीबों का मित्र, मूर्ति पूजा पर विश्वास न रखने वाला, सर्व सँसार का भला चाहने वाला, केवल एक अकाल पुरख के अतिरिक्त और किसी पर भरोसा न रखने वाला, सदैव उन्नतिशील प्रगति की ओर अग्रसर, सँसार में रहता हुआ सँसार से विमुख, बेलाग हो जा, जैसा गुरू गोबिन्द सिंघ। हुआ भी ऐसा ही। गुरू गोबिन्द सिंघ की आशीष लेने उस बैशाखी वाले दिन, समूह में कम से कम बीस हजार व्यक्ति उठ खड़े हुए। कुछ असमंजस में पड़े रहे। कई उठकर चले गये क्योंकि इस नये धर्म के आदर्श क्रान्तिकारी थे और उन लोगों में अभी पुराने रीति-रिवाज छोड़ने की हिम्मत नहीं थी। लोग यह देखकर हैरान रह गये कि गुरू चेलों से अमृत का प्रसाद ग्रहण कर रहे थे। दुनियां के इतिहास में कोई ऐसी घटना नहीं हुई जिसमें किसी गुरू अथवा पीर-पैगम्बर ने अपने मतावलम्बियों को अपने बराबर या अपने से ऊँचा दर्जा दिया हो। यह रूहानी जम्हूरियत की एक अनोखी मिसाल पेश हो रही थी। इसीलिए तो कहा गया है कि "वाह-वाह गुरू गोबिन्द सिंघ आपे गुरू चेला"। चेले तो सदा ही से गुरू की प्रशंसा करते आए हैं, पर यह गुरू गोबिन्द सिंघ है जिसने चेलों को यह बड़प्पन दिया और लिखा -

'युद्ध जिते इनही के प्रसादि, इनही के प्रसादि सु दान करे।

अध उघ टरे इनही के प्रसादि, इनही के कृपा फुन धाम भरे।

इनही के प्रसादि सुविद्या लई, इनही की कृपा सभ शत्रु मरे।

इनही की कृपा के सजे हम हैं, नहि मो से ग़रीब करोर परे।

यह अद्वितीय प्रजातंत्र, यह ग़रीब निवाज़ी और यह अथाह नम्रता – 'नहिं मोसे ग़रीब करोर परे' – शायद ही दुनिया में किसी के हिस्से इस हद तक आई हो, जितनी कि गुरू गोबिन्दसिंह के। परन्तु ध्यान रहे – पाँच प्यारों को जीवन और मृत्यु की कड़ी परीक्षा लेकर चयन किया गया था, मत पत्र डाल कर चुनाव नहीं।

गुरू साहिब की ओर से चेलों द्वारा अमृत पीने की माँग सुनकर सिक्ख संगतों को हैरानी तो होनी ही थी चेले भी घबरा गये। कहने लगे – 'सच्चे पातशाह, यह पाप हमसे न करवायें। आप ही तो अमृत के देने वाले हैं। हम बेचारों की क्या हैसियत कि आपके सामने गुस्ताखी करें और आपको आपकी दात में से अमृत छकायें। गुरू गुरू है, चेला आखिर चेला। हम आपकी बराबरी भला कैसे कर सकते हैं?फिर बराबरी ही नहीं, आप तो हमसे दात माँगकर हमें अपने से भी ऊँचा दर्जा दे रहे हैं, नहीं जी, यह पाप हमसे नहीं होगा। आप हमारी दीन – दुनियां के मालिक हैं। हमने अपना लोक – परलोक सुधारने की डोर आपके हाथ पकड़ाई है। आपको भला अमृत किस प्रकार छका सकते हैं ?'

यह सुनकर गुरू जी ने बहुत ही धैर्य और सुरूर में आकर कहा, 'आज से मैं एक नये पंथ की नींव रखता रहा हूँ, जिसमें न कोई छोटा है न बड़ा, न नीच है न ऊँच, सभी बराबर होंगे। इस बात को सिद्ध करने के लिए आप लोगों से मैं स्वयँ अमृतपान करूँगा। इस सामाजिक बराबरी का आरम्भ स्वयँ मुझ ही से होगा।'

अब गुरू के पाँच प्यारों के पास इन्कार करने का कोई बहाना न था। उन्होंने गुरू जी को भी उसी प्रकार अमृत छकाया, जिस प्रकार स्वयँ छका था। यह दृश्य देखकर सारे वातावरण में जोश और खुशी की बाढ़ सी आ गई। वातावरण सत्य श्री अकाल के जयकारों से गूँज उठा – संगतें झूम उठीं। 'धन्य गुरू गोबिन्द सिंघ आपे गुरू चेला'।

अमृत की बाँट दो हफ्ते जारी रही और अमृत छकने वालों की संख्या बीस हजार से अस्सी हजार हो गई। अमृतपान करने वालों की काया पलट गई। वे सिक्खों से सिंघ बन गए। इसलिए आज्ञा हुई कि आज से हर एक सिख अपने नाम के साथ सिंघ शब्द जोड़ा करेगा। इसी आदेश के अनुसार गोबिन्द राय जी का नाम भी परिवर्तित करके गुरू गोबिन्द सिंघ कर दिया गया।

अमृत देवताओं का भोजन है। इसलिए जिस व्यक्ति ने भी इसे छका, इन्सान न रहा, भट्टी में तपे हुए कंचन की भान्ति खालिस अथवा शुद्ध हो गया। गुरू गोबिन्द सिंघ ने अपने पाँच प्यारों को खालसा की उपाधि दी और गुरू नानक का सिक्ख खालसा पंथ का सदस्य बन गया।

इसके पश्चात् गुरूदेव ने इन शब्दों के साथ खालसे को सम्बोधित किया – 'आज से आप अपने आपको जाति–पाति से मुक्त मानो। आप लोगों को हिन्दुओं अथवा मुसलमानों किसी का भी तौर तरीका नहीं अपनाना, किसी वहम अथवा भ्रम में नहीं पड़ना। केवल एकमात्र अकाल पुरूख में भरोसा रखना है, जो सभी का रखवाला (पालक) है। वहीं सृष्टि का कर्त्ता और नाश करने वाला है। आपके इस नये पंथ में छोटे से छोटा व्यक्ति बड़े से बड़े व्यक्ति के बराबर समझा जाएगा और सभी एक दूसरे को भाई समझेंगे। आज से आपके लिए किसी तीर्थ यात्रा का प्रश्न नहीं, न ही किसी तप का, केवल गृहस्थ जीवन को मर्यादित बनाओ और धर्म के लिए शहीद होने को हर समय तैयार रहो। इस नये पंथ में महिलाओं को भी बिल्कुल वही अधिकार प्राप्त हैं जो पुरूषों को। महिलाएँ पुरूषों के बराबर समझी जाएंगी। लड़की मारने वालों के साथ खालसा सामाजिक व्यवहार नहीं रखेगा। गुरू के प्रति पूरी श्रद्धा के रूप में पुराने ऋषियों मुनियों की भान्ति खालसा केस रखेगा। केसों को स्वच्छ रखने के लिए कंघा रखने की आज्ञा है। परमात्मा के विश्व–व्यापी होने का चिन्ह आपके हाथ में एक लोहे का कड़ा होगा। एक कच्छा होगा आपके संयम की निशानी। सुरक्षा के लिए कृपाण रखने का हुक्म है। तम्बाकू और स्वास्थ्य को खराब करने वाली अन्य नशीली चीजें भी आपके लिए वर्जित हैं। शस्त्रों के साथ आपको प्यार रहेगा। आप अच्छे घुड़सवार, निशानची, नेजा–तलवार के धनी होंगे। शारीरिक शक्ति की उतनी ही कदर होगी, जितनी आत्मिक सूझ–बूझ की। हिन्दू और मुसलमान के मध्य आप एक पुल का काम देंगे। बिना जाति, रंग, वेश और मज़हब का ख्याल किए, आप गरीबों और दुखियों की सेवा करेंगे। मेरा खालसा गरीबों का आश्रय होगा और पंथ में देग और तेग दोनों का प्रचलन होगा। आज से आप सिंह शब्द का उपयोग करेंगे और एक दूसरे से मिलने के समय 'वाह गुरू जी का खालसा वाह गुरू जी की फ़तह' कहकर जयकारा बुलायेंगे।

यह था गुरू गोबिन्द सिंघ का खालसा के लिए हुक्मनामा। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि रूहानी और भाईचारक प्रजावाद के जो उसूल इस हुक्मनामें में दर्ज हैं, वे इतने क्रान्तिकारी और गुरू जी की प्रगतिशील वृत्ति तथा दूरदर्शी सूझ–बूझ के परिचायक हैं कि आजकल के प्रगतिशील वैज्ञानिक युग में भी कई पश्चिमी देश भी इन्हें अपनाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

इस तरह सारे सिक्ख एक पक्के रिश्ते में बंध गए जिन का माता, पिता, जन्म स्थान, वासी, स्वरूप, पाशाक, जीवन संस्कार सब एक समान हो गए थे। पहले प्रत्येक सिख अकेला था। अब वह पंथ में समा गया था। उस पंथ में जिस में अमृतपान करके गुरू गोबिन्द सिंघ साहिब स्वयँ समा गए थे। जैसे एक बूंद का कोई महत्त्व नहीं होता, पर बूंद – बूंद हो कर समुद्र बन जाता है और पानी एक महान

शक्ति का रूप धारण कर लेता है, उसी प्रकार जब सिख "पंथ" का रूप बन गए तो वह एक महान शक्ति का अंग बन गए। वह शक्ति जिस ने हिन्दुस्तान के इतिहास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। जहाँ पंथ ने धर्म का प्रचार किया, सामाजिक कुरीतियों को दूर किया, वहीं एक खास प्रकार के राज्य प्रबन्ध का नमूना भी पेश किया जो बाबा बंदा सिंघ जी बहादुर की जत्थेदारी में हुआ।

अपनी कृति खालसा पंथ पर गुरू साहिब रीझ उठे। रीझते भी क्यों न, आखिर 230 वर्षो के परिश्रम का परिणाम जो था। प्यार में आ कर आपने खालसा की उपमा इस प्रकार की -

खालसा मेरो रूप है खास। खालसे महि हौं करौं निवास।
खालसा मेरो मुख है अंगा। खालसे के हउं सद सद संगा।
खालसा मेरो इष्ट सुहिरद। खालसा मेरो कहीअत बिरद।
खालसा मेरो पछ अर पादा। खालसा मेरो मुख अहिलादा।
खालसा मेरो मितर सखाई। खालसा मात पिता सुखदाई।
खालसा मेरी सोभा सीला। खालसा बंध सखा सद डीला।
खालसा मेरी जात अर पत। खालसा सौ मा की उतपत।
खालसा मेरो भवन भंडारा। खालसे कर मेरो सतिकारा।
खालसा मेरो सजन परवारा। खालसा मेरो करत उधारा।
खालसा मेरो पिंड परान। खालसा मेरी जान की जान।
मान महत मेरी खालसा सही। खालसा मेरो सवारथ सही।
खालसा मेरो करे निरवाह। खालसा मेरो देह अर साह।
खालसा मेरो धरम अर करम। खालसा मेरो भेद निज मरम।
खालसा मेरो सतिगुर पूरा। खालसा मेरो सजन सूरा।
खालसा मेरो बुध अर गिआन। खालसे का हउ धरों धिआन।
उपमा खालसे जात न कही। जिहवा ऐक पार नहि लही।
सेस रसन सारद की बुध। तदफ उपमा बरनत सुध।
या मैं रंच न मिथिआ भाखी। पारब्रह्म गुरू नानक साखी?
रोम रोम जे रसना पाऊ। तदप खालसा जस तहि गाउं।
हउ खालसे को खालसा मेरो। ओत पोत सागर बूंदेरो।

(सब लौह ग्रंथ में से)

रहित मर्यादा का महत्त्व

यह बात भली भान्ति समझ लेनी चाहिए कि अमृत की शक्ति के पीछे वास्तव में सिक्खी की रहित अर्थात जीवनशैली ही काम करती है। यदि यह प्रश्न किया जाए कि रहित मर्यादा क्या है ?तो हम उत्तर देंगे कि अपनी मनमति को त्याग कर गुरूमति को धारण करके उसके अनुसार जीवन व्यतीत करना ही रहित का धारशी होना है।

इस विशय पर गुरूदेव का हमारे लिए आदेश है –

इतु मारगि चले भाई अड़े, गुरू कहै सु कार कमाए जीउ।

तिआगे मन की मतड़ी, विसारे दूजा भाउ जीउ।

इउ पावहि हरि दरसावड़ा नह लगै तती वाउ जीउ।

(सूही म. 5 पृष्ठ 763)

गुरूदेव के शब्द अर्थात उपदेश की वास्तविक रहित वही है, जो मनुष्य के अन्त:करण में से विकारों को समाप्त करके उस के मन में धर्म का प्रकाश उत्पन्न करता है।

पूरे गुरू के शब्द को जीवन में व्यावहारिक रूप देते हुए, सिख का एक विशेष प्रकार का स्वभाव बन जाता है। वही स्वभाव उसको बुराइयों से रोकती है और धर्म से गिरने नहीं देती – भले ही कितनी ही कठिनाइयाँ आ जाए। एक विशेष प्रकार की प्रवृत्ति बनाने के लिए ही सिख को प्रतिदिन नित्यनेम करने की हिदायत दी गई है और कहा –

रहिणी रहै सोई सिख मेरा, उह ठाकुर मैं उसका चेरा।

रहित बिना नहि सिख कहावै, रहित बिना दर चोटा खावै।

रहित बिना सुख कबहू न लहै, तां ते रहित सु दृढ़ कर रहै।

इसके अतिरिक्त गुरूदेव ने सतर्क किया कि यदि कोई व्यक्ति सिक्खी वेश–भूषा तो बनाता है किन्तु विधिवत गुरू दीक्षा नहीं लेता अर्थात पाँच प्यारों के समक्ष उपस्थित होकर अमृतपान नहीं करता तो मेरी उसके लिए प्रताड़ना है –

धरे केश पाहुल बिना, भेखी मूढ़ा सिख।

मेरा दरशन नाहि तिस, पापी तिआगे भिख।

इस प्रकार हुक्म हुआ जब तक खालसा पंथ न्यारा रहेगा, रहित पर चलेगा, तब तक वह चढ़दी कला अर्थात बुलंदियों में रहेगा परन्तु जब वह रहित में कोताही करेगा अर्थात अनुशासनहीन हो जायेगा तो उसका पतन निश्चित समझो और उन्होंने फरमान जारी किया।

जब लग खालसा रहे निआरा, तब लग तेज दीओ मैं सारा।

जब इह गहै बिपरन की रीत, मैं न करो इनकी प्रतीत।

गुरूसिख के लिए जहाँ मन की रहित अथवा अनुशासित जीवनशैली जरूरी है, वहीं तन की रहित भी जरूरी है। वह है पाँच ककारों का धारणकर्ता होना। पाँच ककारों के विषय में निर्देश इस प्रकार हैं –

नशानि सिखी, ई पंज हरफि काफ ।

हरगिज़ न बाशद, ई पंज मुआफ ।

कड़ा कारदो, काछ, कंघा बिदां ।

बिना केस, हेच अस्त, जुमला निशान ।

(भाई नन्द लाल गोया)

दम्भी सिक्खों द्वारा विरोध

इस बैशाखी सम्मेलन में कुछ दम्भी सिख भी आये हुए थे, जिनके हृदय में अभी तक अपनी जाति का अभिमान मन में भरा हुआ था। उन्होंने गुरूदेव की इस कार्यवाही को बिल्कुल पसन्द न किया। वे उठे और विरोध प्रदर्शन करने लगे और अपने धर्म, रीतियों में हस्तक्षेप के आरोप में हल्ला – गुल्ला करने लगे किन्तु गुरूदेव चट्टान की तरह अडोल रहे और उन्होंने अपने सिंहों को गुरू वाणी के उदाहरण संकेत रूप में प्रस्तुत करके कहा –

जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तूही ढरै।

नीचह ऊँच करै मेरा गोबिन्द काहू ते न डरै। (पृष्ठ 1106 रविदास)

उन्होंने कहा कि नीच अवश्य ही उच्च होंगे। यह अकाल पुरूष का आदेश है, जिसका हमने पालन करना है। जिन लोगों को आज जाति के कारण, ब्राह्मण घृणा करते हैं, मेरे पीछे वे ही मेरे उत्तराधिकारी होंगे और सम्मान प्राप्त करेंगे। गुरूदेव ने अपना वचन पूर्ण किया और किसी के भी विरोध की कोई परवाह नहीं की और नवीन सिंहों को वर दिया –

जिनकी जात और कुल मांही, सरदारी न भई किदाही।

तिनही को सरदार बनाऊँ, तबे गोबिन्द सिंघ नाम कहाऊँ।

यथा

इन गरीब सिखन को दैं पातशाही।

याद करै हमरी गुरिआई।

सैद्धान्तिक दृष्टान्त

एक दिन श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी का दरबार सजा हुआ था। गुरूदेव अपने सिहासन पर बैठे थे। कीर्तनी जत्थे मधुर स्वर में गुरवाणी गायन की। तद्पश्चात गुरमति के एक विशेष विद्वान ने गुरवाणी के सर्वश्रेण्ठ और सर्वोत्तम सिद्धान्तों की व्याख्या की और उसने उन सिद्धान्तों को व्यवहारिक जीवन में अपनाने की प्रेरणा दी। जब यह सज्जन धर्म के सत्य स्वरूप पर प्रकाश डाल ही रहे थे तो इतनी देर में दस पन्द्रह सिक्खों का एक टोला बाहर से दरबार में प्रवेश हुआ। उनके पीछे बच्चे, जवान और अन्य लोग ऊँचे स्वर में हँसते हुए तथा मजाक करते आ रहे थे। इन सिक्खों के पास एक गधा था, जिसे वे दरबार के बाहर बाँध आये थे। आने वाले एक सिक्ख ने अपने कन्धे पर शेर की सुन्दर खाल लटकाई हुई थी तथा उस खाल का कुछ भाग हाथ से पकड़ा हुआ था।

जब सभी सिक्खों ने गुरूदेव को शीश झुका कर प्रणाम कर लिया तो गुरूदेव ने कुछ विचित्र शोरगुल का कारण पूछा। उन्होंने लोट–पोट होते हुए वह सारा वृत्तान्त सुनाने लगे। इस घटनाक्रम को सारी संगत ने बड़े ध्यानपूर्वक श्रवण किया। उस सिक्ख ने बताया, हजूर ! पिछले तीन–चार दिनों से नगर के पश्चिम की ओर से निकलने वाले लोग, एक शेर को नगर की सीमा के पास खेतों के उस ओर वन के निकट घूमते हुए देख रहे थे। उस तरफ से आने वाले लोग काफी सर्तकता से आवागमन कर रहे थे। इक्के–दुक्के यात्री तो शेर को दूर से ही देखकर भय के मारे नगर

की ओर भाग कर वापिस चले आते थे। यह चर्चा समस्त नगर में भय का कारण बनी हुई है और आपको इस की सूचना दी गई थी। इस पर गुरूदेव हल्की-हल्की मुस्कुराहट से सारी संगत पर दृष्टि डाल रहे थे।

खोदा पहाड़ निकला चूहा ! उस सिक्ख ने वार्ता आगे जारी रखते हुए कहा - आज सुबह नगर का कुम्हार कुछ गधे लेकर चिकनी मिट्टी लेने नगर के बाहर जा रहा था। इन गधों को देखकर उस शेर ने रेंकना शुरू कर दिया। उस शेर को रेंकते देखकर कुम्हार को वास्तविकता समझने में देर न लगी। उसने उस शेर को जा पकड़ा और जांचा। किसी ने बड़ी सावधानी से, इस गधे के ऊपर शेर की खाल मड़ दी थी। जिस कारण दूर से इस भेद का बिल्कुल भी पता नहीं लग रहा था। कुम्हार ने इस शेरनुमा गधे की शेर वाली खाल उतार ली जो कि हम आपके पास लेकर हाजिर हुए हैं और वह गधा अब हम बाहर बाँध आये हैं। सारी संगत हँसी के मारे लोट-पोट हो रही थी। सभी लोग इस हास्यास्पद घटना को सुन हँसी न रोक सके। बाहर से आया वह सिक्ख सब को तथाकथित शेर की खाल दिखा रहा था।

गुरूदेव ने सभी संगत को सम्बोधन करते हुए कहा, - "आप सब इस शेरनुमा गधे की असलियत प्रकट होने पर हँस रहे हैं, परन्तु यह बताओ कि आप में से कौन उस शेरनुमा गधे का भाई है ? छिपाने की कोशिश न करो। समस्त संगत में कोई भी ऐसा न निकला जो शेरनुमा गधे के साथ सम्बन्ध प्रकट करता।"

गुरूदेव कहने लगे कि सिक्खों में अभी बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं, जो दृढ़ता तथा विश्वास की कमी के कारण समय समय विचलित होते रहते हैं तथा डगमगा कर भटक जाते हैं। उन्होंने केवल देखा-देखी सिक्खों वाला स्वरूप अवश्य ही धारण कर लिया है परन्तु अन्दर से आचरण सिक्खों वाला नहीं। केवल वेश-भूषा सिक्खों वाली डालने से धर्म का वास्तविक लाभ प्राप्त नहीं होता। जिन सिक्खों ने अपने मन को समर्पित नहीं किया अथवा वाणी, रहणी (जीवन चरित्र) को व्यवहारिक रूप नहीं दिया, उनकी बाहरी दिखावट केवल धर्म का ढकोसला बनकर रह जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहँकार पर काबू पाकर, अन्त:करण की शुद्धि, त्याग, मधुरभाणी, परोपकारी जैसे ऊँचे आदर्शो पर आचरण करने पर बाहरी रहत की शोभा बढ़ती है। बाहरी रहत अर्थात पाँच ककारी वर्दी धारण करने पर व्यक्ति सिंघों (शेरों) जैसा मालूम पड़ता है। यदि अन्दर जीवन चरित्र में परिवर्तन न हुआ, निर्भयता तथा शौर्य जैसे गुण उत्पन्न न हुए तो व्यक्ति उस गधे की तरह है जिस पर शेर की खाल मड़ी हुई थी। वास्तव में दिखावे वाले लोग ही धर्म के अपमान का कारण बनते हैं और उस गधे की तरह अपमानित

होकर अपना शेरों वाला स्वरूप खो बैठते हैं। अत: सदाचारी गुणों वाला जीवन ही सिक्खी है अथवा शेरों वाला स्वरूप है।

गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि उन्होंने ही गधे पर शेर की खाल मड़वा कर यह कौतुक रचा था, जिससे जन-साधारण को दृष्टान्त देकर गुरमति दृढ़ करवाई जा सके।

लेखक :- जसबीर सिंघ

फोन न. 0172-2696891, 09988160484

कृप्या आप सिक्ख इतिहास पढ़ने के लिए वैबसाईट सिक्ख वर्ल्ड.इनफो (sikhworld.info) अवश्य देखियें

समाप्त

Download Free

निम्नलिखित वेबसाइट में दस गुरूजनों का सम्पूर्ण जीवन वृत्तांत विस्तृत रूप में अवश्य देखें तथा पढ़ें।

www.sikhworld.info
or
www.sikhhistory.in

E-mail : info@sikhworld.info
&
jasbirsikhworldinfo@gmail.com

ਉਪਰੋਕਤ ਵੇਬ ਸਾਇਟ ਵਿੱਚ ਦਸ ਗੁਰੂਸਾਹਿਬਾਂਨ ਦਾ ਸੰਪੂਰਨ ਜੀਵਨ ਬਿਊਰਾ ਵਿਸਤਾਰ ਸਹਿਤ ਜ਼ਰੂਰ ਦੇਖੋ ਅਤੇ ਪੜੋ ਜੀ।

इस वैब साईट की विशेषता

इस में है एक विशाल सिक्ख संग्रहालय (Museum)

श्री गुरु नानक देव जी के जीवन वृंत्तातों से सम्बन्धित घटना क्रमों के चित्रों से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन काल तक काल्पनिक तस्वीरों जो इतिहास के द्रसाती हैं तथा उनके नीचे हैं हिन्दी और पंजाबी में टिप्पड़ियां (फुटनोट) जो घटनाक्रम अथवा इतिहासिक प्रसंगों का वर्णन करती हैं।

नोटः – यह कार्य बच्चों की रुची को मद्देनज़र रख कर किया गया है ताकि वे सहज में अपना इतिहास जान सके। मुझे आशा है सिक्ख जगद् के किशौर अथवा युवक इस विधि से लभान्वित होंगे क्यों कि इस प्रणाली में आधी बात तस्वीरे कहती हैं तथा आधी बात निम्नलिखित फुटनोट कहते हैं। इस प्रकार पाठकों के मन में अपने इतिहास को जानने के प्रति रुची जागृत हो जाती है। अब आप इस के आगे सत्तारवीं + अठारहवीं + उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी के शहीदों के चित्र फुटनोट सहित देखेंगे। इस के साथ ही सिक्ख महापुरुषों अथवा महान व्यक्ति के लोग को भी देखेंगे। और टिप्पड़ियों द्वारा जाने जाएगे। कृप्या आप सिक्ख मयुजियम पर अवश्य ही किलिक किजिए।

नोट :–

1. यदि कोई इसे पुनः प्रकाशित करवाना चाहे तो वह निःशुल्क बटवा सकता है।

Download Free